جون ۲۰۰۵ء
سیدۂ عالمؑ نمبر

ماہنامہ
شعاع عمل
لکھنؤ

قَالَ اللّٰہُ تَبَارَکَ وَ تَعَالٰی
قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰہِ نُوْرٌ وَّ کِتَابٌ مُّبِیْنٌ
بیشک اللہ کی طرف سے تمہارے پاس نور آیا ہے اور روشن کتاب

مؤسسۂ نور ہدایت حسینیۂ غفران مآبؒ لکھنؤ۔۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526-JUNE 2005
Postal Regd. No.-SSP/LW/NP-75/2005-07

Monthly
SHUA-E-AMAL
Lucknow

शुआ-ए-अमल
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका
लखनऊ

NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION
Imambara Ghufran Maab, Chowk
LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA
Phone : 2252230

वर्ष–1

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2005-07

अंक 12

माह जून 2005 लखनऊ

नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन की
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

शुआ-ए-अमल

''लखनऊ''

वार्षिक – 200 रु

मिलने का पता

क़ीमत – 20 रु

नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन
इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ – 3 (उ.प्र.) भारत फोन न0 0522–2252230

सै. कल्बे जवाद प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपरइटर ने मासिक शुआ–ए–अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से और टाईटिल कवर एडर्वटाज़र्स इण्डिया गोलागंज लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूर–ए–हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ–3 से प्रकाशित किया।

2

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

६ खुदावन्दे आलम ने वहदानियत पर ईमान को इसलिये वाजिब क़रार दिया ताकि लोगों को शिर्क की नजासत से पाक करे .... अम्र बिलमारूफ़ को अवाम के फायदे के लिये वाजिब क़रार दिया और नहीं अनिलमुनकर को इसलिये फ़र्ज़ फरमाया ताकि अहमक़ व कम अक़्ल लोगों को हवा व हवस की पैरवी से महफ़ूज़ रखे। (नह्जुल बलाग़ह–6)

६ तुम्हारे बदन के हर हिस्से पर ख़ुदावन्दे आलम की तरफ से ज़कात वाजिब है बल्कि हर बाल पर, बल्कि हर नज़र और निगाह पर .... शहवात और ख़्वाहिशाते नफसानी से चश्म पोशी, आँख की ज़कात है। और इल्म व हिक्मत और कुर्आन व सुन्नत यह कान की ज़कात है।

(इमामे जाफ़र सादिक़ अ0)

सैय्यदा-ए-आलम(अ0)

सैय्यदुल उलमा मौलाना सै0 अली नक़ी नक़वी (ताबा सराह)

इस्लामी दुनिया की जबीने अक़ीदत ख़म है उस मुअज़्ज़मा की बारगाहे असमत के सामने जो पैग़म्बरे इस्लाम (स0) की एक अकेली बेटी थी और जिससे रसूल (स0) से नाम दुनिया में बाक़ी रहा।

विलादत

आपकी विलादत जमादिस्सानी की 20वीं तारीख़ है। इसमें एक तो कोई इख़्तेलाफ भी नहीं मालूम होता और फिर मुहम्मद बिन जरीर तबरी (शीआी) की रवायत बसनदे मुत्तसिल अबुलबसीर की ज़बानी इमाम जाफर सादिक़ से मौजूद है जो मेरी राय में सहीस्सनद और बिलकुल मुसतनद है। साले विलादत में बेशक इख़्तेलाफ है जिसका बहुत अहम असर आपकी उम्र की ताअीन के मसले पर पड़ता है। शीआ फ़िरक़े में मश्हूर है कि आपकी विलादत बेअसत के पाँच साल बाद हुई और हिजरत के मौक़े पर आपकी उम्र सिर्फ आठ साल की थी। यह उलमा का ख़याल ही नहीं है बल्कि इस मज़मून की रवायत सिक़तुल इस्लाम मुहम्मद बिन याक़ूब कुलैनी ने मुसलसल इस्नाद के साथ इमाम बाक़र से दर्ज की है जो बएतबार अपने तरीक़े रवायत के ''हसन'' का दर्जा रखती है और मुहम्मद बिन जरीर तबरी की साबिक़ा रवायत में भी जिसे मैंने कहा कि सहीहुस्सनद है यही मज़कूर है और इसी के मुवाफिक़ इब्ने ख़शाब ने इमाम मुहम्मद बाक़िर से नक़ल किया है। और दूसरा क़ौल फिरक़–ए–शीआ में यह है कि बेअसत के दो साल बाद विलादत हुई। इसे शेख़ मुफीद ने हदाएकुर्रियाज़ में और कफअमी और शैख़ ने मिस्बाह में दर्ज किया है मगर अइम्मा–ए–मासूमीन की गुज़श्ता अहादीस की मौजूदगी में इस क़ौल को कोई अहमिय्यत नहीं दी जा सकती। इसके बिलकुल बरख़िलाफ अहलेसुन्न्त का यह क़ौल है कि आपकी विलादत बेअसत से पाँच साल पहले हुई है। इस सूरत में हिजरत के वक़्त आपकी उम्र 18 साल थी। मुमकिन है इस रवायत को वाक़ेआत से किसी तरह की ताईद हासिल हो सके मगर ऐसे तमाम मसाएल हैं यह अम्र ख़ुसूसियत के क़ाबिले लिहाज़ है कि किसी घराने के ख़ानदानी हालात के बाब में जिस क़द्र वज़न उसी ख़ानदान के अफराद के बयान का हो सकता है उतना वज़न दूसरे ग़ैर मुताल्लिक़ अश्ख़ास के बयानात को हरगिज़ नहीं हो सकता। खुसूसन जब कि वह ग़ैर मुताल्लिक़ अश्ख़ास उस ज़माने में कोई वजह भी उसको महफ़ूज़ रखने की न रखते हों। यह ज़ाहिर है कि आम मुसलमानों को रसूल (स0) के साथ किसी हद तक ताल्लुक़ जो पैदा हुआ है वह एलानिया तबलीग़े इस्लाम के बाद, इसके पहले कोई बाअिस नहीं था कि वह रसूल (स0) के घर के वाक़ेआत के मुताल्लिक़ कोई दिलचस्पी लेते। इस सूरत में उन्हें ऐसे मामले में कोई धोका हो जाना हरगिज़ क़ाबिले ताज्जुब नहीं है। जबकि तारीख़ निगारी का पहलू मुसलमानों में इतना कमज़ोर था कि इस्लाम को पूरी कुव्वत हासिल हो जाने के बाद और मदीने में मुसलमानों की मरदुम शुमारी हज़ारों की तादाद में पहुँचने के बाद ख़ुद रसूल (स0) की वफात के ऐसे अहम वाक़ेअे की तारीख़ को मुसलमान पूरे तौर पर महफ़ूज़ नहीं रख सके

और आज तक तरद्दुद व इश्तेबाह मौजूद है। फिर क्या कहा जाये उस वाक़ेअे के मुताल्लिक़ जो मुसलमानों के इस्लाम लाने के पहले का हो यानि जिस वक़्त मुसलमानों की जमात मौजूद ही न हो। यक़ीनन एक ग़ैर जानिबदार शख़्स मजबूर है इस बात पर कि उस ख़ानदान के लोगों को अहमिय्यत दे जो ख़ास उस वाक़ेअे से ताल्लुक़ रखते हैं और जिन तक ख़ानदानी ख़ुसुसियात व वाक़ेआत सीना बसीना पहुँच सकते हैं।

वालिदह का इन्तेक़ाल

खदीज–ए–कुबरा जिनके लिए सैय्यद–ए–आलम ऐसी लड़की की विलादत तमाम उनकी ज़िन्दगी का एक क़ीमती माहसल थी, अफसोस है कि सैय्यदा के ज़िन्दगी की बहार देखने के लिए ज़िन्दा नहीं रहीं और न सय्यदा को उनकी माद्दी शफ़क़तों से लज़्ज़त अन्दोज़ होने का मौक़ा मिला।

बेअसते रसूल (स0) को 6 बरस, 8 महीने और 27 दिन गुज़रे थे जब रसूल (स0) की यह बेहतरीन रफीक़े ज़िन्दगी और इस्लाम की परस्तार दुनिया से रुख़सत हुई।

सही रवायत के मुताबिक़ उस वक़्त सैय्यदा की उम्र सिर्फ डेढ़ बरस की क़रार पायी है और उस वक़्त मुसीबत वह होती है जिसमें ज़बाने इज़्हार भी उमूमन दिल की मदद के लिये तैय्यार नही होती।

ख़दीजा को भी अपने आख़िर वक़्त में ख़याल था तो एक, सदमा था तो बस यही कि अफसोस यह लड़की मेरे सामने परवान न चढ़ी। उन्हें बहुत से मवाक़ेअ याद आ रहे थे जब लड़कियों को माँ की ज़रूरत होती है।

असमा बिन्ते उमैस ने उस वक़्त जब सैय्यदा की शादी हुई है उस वक़्त के एक पुर हस्रत वाक़ेअे की याददिहानी की है। वह कहती हैं कि ख़दीजा बिस्तरे मर्ग पर थीं और हालत ग़ैर हो चुकी थी। एक मर्तबा ज़ारो क़तार रोने लगीं और आँखों से आँसुओं की लड़ियाँ जारी हो गयीं। मैंने रोने का सबब पूछा तो कहा कि जब लड़की की शादी होती है और वह पहले पहल अपने शौहर के घर जाती है तो बिलकुल नई नवेली होती है, नया घर, नये लोग। इसलिए अरब में दस्तूर है कि पहली मर्तबा माँ उसके साथ जाती है। मुझे इस वक़्त ख़याल आया कि मैं तो दुनिया से जाती हूँ जब मेरी लड़की जवान होगी तो उसके साथ शौहर के घर कौन जायेगा। अच्छा असमा तुम मुझसे वादा कर लो कि तुम मेरी बच्ची के साथ जाओगी और उसे अकेला न छोड़ोगी। असमा ने वादा किया। चुनानचे उस वक़्त जब सैय्यदा को रुख़सत करके तमाम औरतें वापस गयीं तो असमा ने वापसी का इन्कार किया और ख़दीजा की उस वसीयत का ज़िक्र किया।

यक़ीनन अगर हज़रत ख़दीजा ज़िन्दा रहतीं तो सैय्यद–ए–आलम (अ0) के बहुत से एख़लाक़ी औसाफ व ख़ुसूसियात को माँ के हुस्ने तरबियत का नतीजा क़रार दिया जा सकता था मगर सैय्यदा की एख़लाक़ी बुलनदियाँ सिर्फ रसूल (स0) की तरबियत और सैय्यदा (अ0) के ज़ाती हुस्ने फितरत ही का नतीजा क़रार पाती हैं और कुछ नहीं।

हक़ीक़त यह है कि मर्दों में अली (अ0) और औरतों में फातमा (अ0) यह रसूल (स0) की अमली तरबियत और तालीमी ज़िन्दगी को वह दो मोअजज़े थे जिन्होंने रसूल (स0) के मुअल्लिमाना कमाल को आलमे अबदी हैसियत से साबित कर दिया। □□□

जिहादे फातिमा अलैहस्सलाम

मौलाना हसन ज़फ़र नक़वी इजतेहादी साहिब (कराची)

दुख़्तरे रसूल (स0) हज़रत फातिमा ज़हरा (स0) का ज़िक्र आते ही एक ऐसी हस्ती का तसव्वुर ज़ेहन में उभरता है जिसकी सारी ज़िन्दगी ग़म उठाते, मसाएब झेलते गुज़री हो। ढाई तीन साल के सिन में शे'बे अबी तालिब की सख़्तियाँ, कमसिनी में मक्का वालों के हाथों अपने बाप को ईज़ाएँ पहुचते देखना, मूनिस (मददगार) व ग़मगुसार माँ की जुदाई, चाहने वाले दादा अबुतालिब (अ0) का बिछड़ना, हिजरत का सदमा, मदीने की मुश्किल ज़िन्दगी; लेकिन इन तमाम मुशकिलों में सबसे बड़ा सहारा खुद पैग़म्बरे अकरम (स0) की ज़ाते गिरामी थी, पैग़म्बर की मौजूदगी में शहज़ादिये कौनैन (स0) हर सख़्ती को मुस्कुराकर गुज़ारती चली जा रही थीं। लेकिन बाप की जुदाई के बाद सिर्फ 75 या 95 दिन इतने सख़्त गुज़रे कि मासूमा (स0) ने इन दिनों को बदतरीन और सख़्ततरीन दिनों से तश्बीह दी है। यह है वह मुसलसल मसाएब से पुर ज़िन्दगी की तरफ इशारा कि जिसकी वजह से बीबी का नाम आते ही आँखों में नमी का आ जाना बाइसे तअज्जुब नहीं होता।

लेकिन हम यहाँ एक और अन्दाज़ में गुफ्तगू करना चाहते हैं। और वह है मासूम–ए–कौनैन की शुजाअत का वह बाब कि अगर हम थोड़ा सा ग़ौर करें तो हमें यह बात समझ में आ जायेगी कि मौलाए कायनात अली इब्ने अबी तालिब (अ0) के सामने मरहब व अन्तर, और ख़ैबर व ख़न्दक़ जिस अन्दाज़ में आये आप (अ0) ने उन्हें सर किया। लेकिन यही ख़ैबर व ख़न्दक़ जब हैदरे कर्रार (अ0) की ज़ौजा के सामने दूसरे अन्दाज़ में आये तो आपने उन्हें किस अन्दाज़ में ज़ेर किया। यह समझना बहुत ज़रूरी है आख़िर क्या बात है कि ख़ुदा का रसूल (स0) अपनी बेटी को ''उम्मु अबीहा'' (अपने बाप की माँ) का ख़िताब दे रहा है। अपने जिस्म का टुक्ड़ा क़रार दे रहा है, उसकी रिज़ा (मर्ज़ी) को अल्लाह की रिज़ा और उसके ग़ज़ब को अल्लाह का ग़ज़ब क़रार दे रहा है। ख़ुदा का रसूल (स0) जानता है कि उसकी बेटी कोई आम ख़ातून नहीं है बल्कि वह एक मुजाहेदा है ऐसी मुजाहेदा जिसने अपने बाबा की इंक़िलाबी तहरीक को बहुत नज़दीक से देखा है। वह देख रही है कि जब उसका बाबा मक्के के जाहिलों को हक़ की तरफ आने की दावत देता है तो वह उसे कैसी–कैसी अज़िय्यतें देते हैं। कभी ऐसा भी हुआ कि उन दुश्मनाने दीन ने पैग़म्बरे अकरम (स0) के जिस्मे अतहर पर कूड़ा फेंका यहाँ तक कि ऊँट की ओझड़ी (नऊज़ु बिल्लाह यानि अल्लाह की पनाह) तक डाल दी। और यह छोटी सी बच्ची अपने बाबा की मदद करती है। न सिर्फ यह कि पैग़म्बर (स0) के जिस्म से इस गन्दगी को दूर करती है बल्कि घर वापस आकर अपने दादा जनाबे अबुतालिब से इन कुफ्फार की शिकायत करती है जिसके नतीजे में हज़रत अबुतालिब (अ0) अपने बेटों, भतीजों, और दीगर हाशमी जवानों के साथ उन कुफ्फार पर धावा बोलते हैं और अबुजहल जैसे दुश्मनाने रसूल (स0) को पटख़कर वही ग़लाज़त उसके चेहरे पर मल देते हैं।

कमसिनी ही में इस बच्ची ने अपने आपको आने वाले हालात के लिये तैय्यार कर लिया था।

क़ुदरत ने इस बच्ची के हमसर (वर) के तौर पर अली (अ0) का इन्तिख़ाब इसलिए किया था कि मर्दों में भी बहादुर अली (अ0) से बेहतर कोई न था और औरतों में फातिमा (स0) जैसी बहादुर बीबी कोई न थी। यह फातिमा ज़हरा (स0) की ज़ात है कि अगर यह न होतीं तो अहलेबैते रसूल (स0) की पहचान कराने वाला कोई दूसरा न हो सकता था। ''हुम फातिमतु व अबूहा व बअ्लुहा वबनूहा'' का जुमला बता रहा है कि फ़ातिमा (स0) के सिवा जिससे से भी तआर्रुफ कराया जाता ग़ैर के दाख़िले का इमकान मौजूद रहता है। यही वह हस्ती है जो रिसालत, विलायत और इमामत को मुत्तहिद और महफूज़ कर देती है। जंगे ओहद में मैदान की तरफ जाना रसूल (स0) और अली (अ0) के ज़ख़्मों की देखभाल, उनकी तीमारदारी, कमसिनी में घरबार की ज़िम्मेदारी।

यह शरफ फातिमा का है कि उसकी औलाद, औलादे रसूल कहलायी, हसनैन (इमाम हसन व हुसैन) की सूरत में इस्लाम के मुहाफिज़ तैयार करना और ज़ैनब (स0) व उम्मे कुलसूम (स0) जैसी शेरदिल बेटियाँ जो फातिमा जैसी माँ की आग़ोश में परवरिश पाकर कूफे व शाम के बाज़ारों और दरबारों को अपने ख़ुतबों से हिलाकर रख देंगी।

अगर आप जनाबे ज़ैनब से पूछेंगे कि तक़रीर का यह बातिलशिकन (बातिल तोड़) अन्दाज़ किस से सीखा तो मुझे यक़ीन है कि जवाब यही मिलेगा कि यही बातिलशिकन अन्दाज़ दिखाने के लिये तो मेरी माँ जेहरा (स0) मुझे ग़ासिब के दरबार में ले गयी थीं। और हक़ीक़त भी यही है कि दुख़्तरे रसूल (स0) के सामने आने वाले तमाम दौर थे। वरना माले दुनिया से अहलेबैत को क्या सरोकार हो सकता था। फिदक तो एक बहाना था। ज़ालिमों के ज़ुल्म को आश्कार करने का।

बक़ौले ''सरोश'' के:–

मै तेरे क़ुर्बान शहज़ादी फिदक के क़िस्से में यह सियासत
जो तू न उठती तो उठ न सकता, ख़िलाफ़ते ग़ासिबा का पर्दा

हसन (अ0), हुसैन (अ0), ज़ैनब (स0), उम्मे कुलसूम (अ0), जैसे मुजाहिद बच्चों को एक मुजाहिदा माँ की आग़ोश दरकार है। और कायनात में ऐसे बहादुर इसलिए नहीं मिल सकते कि किसी बच्चे को फातिमा (स0) जैसी माँ नहीं मिल सकती। फ़िदक का मारका था कि सिवाय ख़ातूने जन्नत (जनाबे ज़हरा स0) के इसे कोई सर न कर सकता था।

हालात व वाक़ेआत इस तरह के हो गये थे कि फातेहे ख़ैबर व ख़न्दक़ हैदरे कर्रार (अ0) अगर तलवार को बेनियाम करते तो इस्लाम टुक्ड़े–टुक्ड़े हो जाता और अबुतालिब के बेटे पर हुकूमत की ख़ातिर ख़ूँरेज़ी करने का इल्ज़ाम थोप दिया जाता। साज़िश करने वाले खुश थे कि उन्होंने एक तरफ़ अली (अ0) से उसका हक़ छीन लिया है और दूसरी तरफ अली (अ0) को ज़ुलफ़िक़ार के इस्तेमाल से भी रोक दिया है। ऐसे में दुख़्तरे रसूल (स0) मैदाने अमल में आती हैं और अपने तारीख़ी ख़ुतबे से बातिल को अबदी रुस्वाई से दोचार करती हैं। अब क़यामत तक बातिल फिदक की रुस्वाई से पीछा छुड़ाना चाहता है मगर फिदक नंग व आर (ज़िल्लत व रुस्वाई) बनकर बातिल के साथ है। यही वह मस्जिदे नबवी में दिया जाने वाला ख़ुत्बा है जिस में शहज़ादि–ए–कौनैन दूसरी ख़्वातीन के अलावा अपनी मासूम बच्चियों ज़ैनब (स0) और उम्मे कुलसूम (स0) को भी हमराह लाई थीं ताकि दोनों शहज़ादियाँ माँ के लहजे को अच्छी तरह ज़ेहननशीन कर लें और दिल में उतार लें।

फातिमा ज़हरा (स0) की मुख़्तसर सी ज़ाहिरी

बक़िया पेज–14 पर

आज़ादी–ए–निस्वाँ और फातिमा ज़हरा(अ0)

मोहतरमा सैय्यदा कुमैल फातिमा साहिबा

आज़ादी–ए–निस्वाँ हमारे ज़माने का सबसे ज़ियादा सुलगता हुआ सवाल है। हर प्लेटफार्म पर, हर मुहाज़ पर, हर स्टेज पर, हर महफिल में, हर मज्लिस में आज़ादी–ए–निस्वाँ का नारा सुनायी देता है। ऐसा लगता है जैसे औरत हमारे ज़माने की सबसे मज़लूम क़ौम है। जिससे ज़िन्दा रहने के इन्सानी हुकूक़ भी छीन लिये गये हैं। और इस दौर के तमाम दानिश्वर मिलकर इसको अपने रहमो करम की भीख देकर इस मज़लूमियत से छुटकारा दिलाना चाहते हैं।

जब कि बात सूरज से भी ज़ियादा रौशन है कि ज़माने ने हर एतबार से तरक़्क़ी की है। इल्मी एतबार से, एख़लाक़ी एतबार से, समाजी और कारोबारी एतबार से भी हमारा ज़माना बेहद तरक़्क़ीयाफ्ता ज़माना कहलाता है। इसीलिये यह सवाल उठता है कि इतने तरक़्क़ीयाफ्ता दौर में जहाँ हर चीज़ ने तरक़्क़ी की हो और हर साँस लेने वाले को आज़ादी की साँस लेना नसीब हुआ हो वहाँ ख़्वातीन ही मज़लूम व महरूम क्यों रहें? कि उनको जुल्म से नजात देने के लिये आज़ादी–ए–निस्वाँ का नारा बुलन्द किया जाये? यहाँ यह बात भी ग़ौर करने वाली है कि अज़ादी–ए–निस्वाँ का यह नारा हक़ीक़ी है या इसके पीछे कुछ और है?

ज़ेरे नज़र मक़ाले में हम ने ख़्वातीन की मौजूदा हालत, आज़ादी–ए–निस्वाँ के नारे का पसमन्ज़र और इसी के ज़ेल में जनाब फातिमा ज़हरा (अ0) के उस्व–ए–हसना के आईने में इसका मुआज़ना करने की कोशिश की है।

अस्रे हाज़िर में ख़्वातीन दुनिया के हर शोब–ए–ज़िन्दगी में दाख़ील नज़र आती हैं। हवाई जहाज़ की पायलेट से लेकर बस की कण्डेक्टर तक और आफिस में काम करने वाली कलर्क से लेकर वज़ीरे आज़म तक हर ओहदे और हर मक़ाम पर औरतों की रसाई मुमकिन है। और अब तो हिन्दुस्तान जैसे अज़ीम मुल्क में भी पार्लियामेन्ट की सीटों तक में ख़्वातीन के लिये रिज़र्वेशन का मुतालबा ज़ोर पकड़ता जा रहा है। औरतों पर होने वाले मज़ालिम के ख़िलाफ सख़्त क़ानून बना दिये गये हैं। हमारे यहाँ ऐसी अदालतें मौजूद हैं जिनमें औरतों को उनका क़ानूनी हक़ दिलवाया जाता है।

चुनानचे जिस शोब–ए–हयात पर आप नज़र डालें यह हौव्वा के बेटी आदम के बेटे के कन्धे से कन्धा मिलाकर चलने वाली है। बल्कि इससे भी आगे निकल जाने की कोशिश में लगी हुई है। इस सारे सफरनामे और उन तमाम मनाज़िर में अगर आप ग़ौर करें तो औरत के ताल्लुक़ से इस तरक़्क़ीयाफ्ता दौर में एक चीज़ है जो हमें कहीं नज़र नहीं आती, वह है घर और ख़ानदान। तरक़्क़ी के जोश में आज का इन्सान यह भूल गया कि औरत चाहे कुछ भी बन जाये, जिन्दगी के हर

मैदान में चाहे कितने ही कारे नुमाया अन्जाम दे लेकिन अगर वह एक अच्छी ''माँ'' न बन सकी तो वह नाकाम है। दरअस्ल वह एक ऐसे काख़ाने को चलाने वाली है जहाँ इन्सान तैय्यार होते हैं। और अगर आप ग़ौर से देखें तो यह कारख़ाने ''जूते'' और ''पिस्तौल'' बनाने वाले कारख़ानों से कुछ कम ज़रूरी तो नहीं हैं। इन कारख़ानों के लिये जिन सिफ़ात और क़ाबलियतों की ज़रूरत होती है। वह फ़ितरत ने सबसे बढ़कर औरत को दीं हैं। अगर यहाँ क़ाबलियत, सलीक़े और दानिश्मन्दी से काम लिया जाये तो इन कारख़ानों से आला दर्जे के इन्सान तैय्यार हो सकते हैं।

लेकिन अफ़सोस का मक़ाम है कि हमारे ज़माने नें आज़ादी–ए–निस्वाँ के नाम पर औरत को अपने कारोबार के लिये एक दर्जा तो दे दिया, आज़ादी तो दे दी लेकिन माँ के दर्जे से महरूम कर दिया। औरत के मुक़द्दस व पाक रिश्तों के सारे शीराज़े मुनतशिर हो गये।

यह ही वह मक़ाम है जहाँ हमें सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि आख़िर आज़ादी–ए–निस्वाँ से हमारे ज़माने की मुराद क्या है? क्या वह अल्लाह तआला की नाफ़रमानी करना चाहता है। ख़ुदाए वाहिद व यक्ता के इस निज़ाम से बग़ावत करना चाहता है जिसने इन्सान की दो असनाफ़ बनायी हैं एक मर्द और एक औरत, क्या परवरदिगारे आलम की यह तख़लीक़ बेकार है जो अब बग़ावत करके इन दोनों तख़लीक़ात को एक कर देने की कोशिश की जा रही है। औरत और मर्द के दायर–ए–अमल को अलग करना ख़ुद फ़ितरत का तक़ाज़ा है। ख़ुदावन्दे आलम ने दोनों क़िस्म की ख़िदमात के लिये औरत और मर्द दोनों को अलग–अलग सिफ़ात दीं, अलग–अलग कुव्वतें दीं, जिसको फ़ितरत ने माँ बनने के लिये पैदा किया उसको सब्र व तहम्मुल बख़्शा है, उसके मिज़ाज में नरमी पैदा की, उसको वह चीज़ दी जिसको मामता कहते हैं। वह ऐसी न होती तो हम और आप बख़ैर पलकर जवान न हो सकते थे। सख़्त मिज़ाजी, क़वी आअ्ज़ा, बुलन्द हिम्मती मर्दों को इसलिये दी कि उन पर भारी ज़िम्मेदारियाँ भी हैं। आज अगर आप इस तक़सीम को मिटाना चाहते हैं तो फिर यह फ़ैसला कर लीजिये कि अब दुनिया को माओं की ज़रूरत नहीं है। थोड़ी ही मुद्दत गुज़रेगी कि इन्सान ऐटम बम और हाईड्रोजन बम के बग़ैर ही ख़त्म हो जायेगा।

तो अब आपको फ़ैसला करना होगा कि क़ुदरत ने जो तक़सीम इन दोनों अस्नाफ़ के दरमियान ख़ुद की है उसे ख़त्म करना इन्सान के बस की बात नहीं है। ख़ुद इन्सान भी इस बात को जानता है कि अपने ख़ालिक़ से बग़ावत मुमकिन नहीं। तो फिर कोई और अम्र है, कोई और ग़र्ज़ है जिसके हुसूल के लिये वह आज़ादी–ए–निस्वाँ का नारा बुलन्द कर रहा है।

औरतों की आज़ादी का अलमबरदार होने का दावेदार हमेशा यूरोप रहा है जिसने ख़ुद अपने समाज में औरत को इन्तिहाई घिनावना और घटिया मक़ाम दे रखा था। यहाँ तक कि मामूली ज़रूरतों के लिये जो इन्सानी ज़रूरियात हैं उसमें भी औरत को मर्द का मोहताज बना रखा है वही यूरोप जिसमें आज भी बुनियादी तौर पर मर्द ही समाज पर हावी है। उसने अपनी मर्दाना ''अना'' की तस्कीन के लिये औरत को घर से निकाला और अब बाज़ार में ले आना चाहता है। और इस तरह अपने दो मक़ासिद की तकमील चाहता है:–

1– औरत को बरहना करके जिन्सी मफ़ाद हासिल हो।

2– औरत तिजारती अग़राज़ो मक़ासिद

में उसके काम आये।

ग़ौर कीजिये हर (Reception) पर औरत ही को क्यों बिठाया जाता है। हर (Sales Counter) सेल्स काउन्टर पर सेल्ज़गर्ल ही क्यों होती है, माल के इश्तेहार पर औरत ही की तस्वीर क्यों दी जाती है? और वह भी तक़रीबन बरहना। इस तरह औरत के ज़रिये अवामुन्नास के जज़्बात को भड़काकर ऐशो आराम के सामान की ख़रीदारी पर आमादा किया जाता है। और फिर इस बरहनगी की नुमाईश को ''आज़ादी–ए–निस्वाँ'' का नाम दिया जाता है। ग़ौर कीजिये यह निस्वानी आज़ादी है या ख़्वाहिशों को पूरा करना?

इस ज़माने में मुक़ाबल–ए–हुस्न भी रोज़ बरोज़ बढ़ते जा रहे हैं। हर कम्पनी अपनी शोहरत के लिये एक मुक़ाबल–ए–हुस्न बरपा कर देती है। और हया की देवी को बरहना करके उसके हुस्न की नुमाइश लगायी जाती है और इस तरह ज़ौक़े जमाल को शौक़े विसाल तक पहुँचा दिया जाता है।

क्या इसी को आज़ादी–ए–निस्वाँ कहा जाये?

एतराज़ किया जा सकता है कि अलमबरदाराने आज़ादी–ए–निस्वाँ सिर्फ यह ही तो नहीं करते औरतों को अदालत में, इन्तिज़ामिया में और शूरा में भी बराबर का मौक़ा दिये जाने का चर्चा है।

हम कहेंगे कि यह सही है कि इन मक़ामात पर ख़्वातीन की ख़िदमात जारी हैं। लेकिन यह बताइये कि क्या इससे पहले हमेशा सालेह समाज में सालेह ख़्वातीन अदालत, इन्तिज़ामिया और क़ानून साज़ इदारों में काम की ख़िदमत अन्जाम नहीं देती रही हैं? लेकिन यह भी वाज़ेह है कि किसी भी सालेह समाज में यह सालेह ख़्वातीन बेपर्दा नहीं हुईं। आज अगर ख़्वातीन इन मज़कूरा शोबाहाए ज़िन्दगी में दिखायी देती हैं तो बरहनगी के साथ और फिर कितनी औरतें हैं जो इन जलीलुल क़द्र ओहदों पर फाएज़ हैं और जो ख़्वातीन इन ओहदों पर फाएज़ हैं या फाएज़ रहें तो उनकी ख़िदमात का मा हसल भी ग़ौर फरमाइये कि एक महदूद मक़ाम पर महदूद अफ़राद को ही मुतास्सिर कर सकें। और वह भी अपने इस्लामी वक़ार और निस्वानी हया को खोकर। यह कहना मेरी अपनी जुराअत नहीं है बल्कि क़ुर्आने हकीम के 24वें और 33वें सूरह में तफसील के साथ अहकाम मौजूद हैं। उनमें औरतों को हुक्म दिया गया है कि:–

''लम यज़हरू अला औरातिन्निसाइ वला यज़रिब्न बिअरजुलिहिन्ना''

''वह अपने हुस्न और अपनी सजावट की नुमाइश न करती फिरें, घरों से बाहर निकलना हो तो अपने ऊपर एक चादर डाल कर निकलें और बजने वाले ज़ेवर पहन कर ना निकलें।''

(सूरएनूर आयत–31)

ग़ौर फरमाइये आज हमारे समाज में जिन्सी बेराहरवी का तनासुब हर ज़माने से ज़ियादा है। क्या यह दिखने वाली निस्वानी आज़ादी के ज़हरीले अस्रात में से एक नहीं है?

आज़ादी–ए–निस्वाँ के इस मुशाहेदे के बाद अब यह मुनासिब होगा कि हम इस्लाम और मुदर्रिसीने इस्लाम व मासूमीन अलैहिमुस्सलाम की हयाते तय्यबा पर ग़ौर करें और देखें कि उनकी सीरत में निस्वानी इज़्ज़त और आज़ादी के पैमाने क्या हैं? और चूँकि फातिमा ज़हरा (अ0) मासूमीने अतहार में अकेली ख़ातून हैं जो मासूमा भी हैं। उम्मुल अईम्मा भी हैं इसलिए हम उन्हीं की हयाते तय्यबा को उस्व–ए–निस्वानी मानकर आपके सामने पेश करते हैं।

कुर्आने हकीम ने मर्दों को औरतों के लिबास की हैसियत से पहचनवाया है।

गोया कुर्आने हकीम ने हमें बताया कि जिस तरह लिबास से इन्सान की हैसियत मुतअय्यन होती है कि वह किस हैसियत का मालिक है, कितनी तहारत व पाकीज़गी है, किस ज़ौक़ का मालिक है, यह तमाम चीज़ें ज़ाहिरी लिबास से ही पता चल जाती हैं। फिर लिबास एक ऐसी चीज़ है जो जिस्म की हिफाज़त करता है, गर्मी व सर्दी से बचाता है, बरहनगी से बचाता है। कुर्आने करीम का इशारा है कि औरतें तुम्हारी ज़ीनत का बाअिस भी हैं, तुम्हारी हैसियत भी इनसे मुतअय्यन होती है। वह तुम्हारी औलाद की मुहाफिज़ भी हैं।

अब हमें देखना है कि इस आयते करीमा की सही मिस्दाक़ शहजादी जनाब फातिमा ज़हरा (अ0) का तरीक़ा क्या है। मश्हूर वाक़ेआ है कि जब मौलाए कायनात का अक़्दे मुबारक जनाब फातिमा ज़हरा (अ0) के साथ हो चुका तो दूसरे दिन पैग़म्बरे इस्लाम (स0) बेटी के घर तशरीफ लाये और दामाद से सवाल किया या अली! (अ0) तुमने अपनी बीवी को कैसा पाया। हज़रत अली (अ0) ने जो जवाब मरहमत फरमाया वह तमाम ख़्वातीने आलम के लिये निशाने राह है। और सिद्दीक़–ए–ताहिरा जनाबे फातिमा ज़हरा (अ0) की अज़्मते किरदार को और उसके एतराफ को उनके मासूम शौहर की ज़बानी ज़ाहिर कर रहा है। नीज़ कुल मोमिनात के लिये मरज–ए–तक़लीद है। आपने फरमाया कि फातिमा (अ0) इबादते खुदा में बेहतरीन मददगार हैं। यह है आयते कुर्आनी का अमली मिस्दाक़ कि औरतें मर्दो का लिबास हैं।

परवरदिगारे आलम ने नौअे इन्सानी को दो अस्नाफ में तक़सीम किया। सिन्फे मर्द और सिन्फे औरत। अल्लाह अगर चाहता तो एक ही सिन्फ काफी थी। लेकिन दो अस्नाफ ख़ुदा ने बनायी हैं तो इसी मक़सद के तहत कि दोनों को दो अहम तरीन ज़िम्मेदारियाँ सुपुर्द कीं। बाहर की ज़िम्मेदारियाँ मर्द को और घर की ज़िम्मेदारियाँ औरत को। और इन सबसे बढ़कर अफ़राद साज़ी का काम। इस फरीज़े के बारे में पहले भी अर्ज़ कर चुकी हूँ कि यह बड़ी अहम ज़िम्मेदारी है। ज़रा ग़ौर कीजिये कि क्या इससे बड़ा कोई मन्सब औरत के लिये मुमकिन था? चुनानचे शहज़ादी–ए–आलम को अगर इस मन्ज़िल पर देखा जाये तो आलम यह है कि मासूम–ए–आलम ने उम्मत को दो जलीलुल क़द्र इमाम दिये जो मासूम भी हैं और ऐसे मासूम कि उनके दामने इस्मत पर तर्के औला भी नहीं है। अगर औरतों में अफ़राद साज़ी की तो इस तरह कि वह दो शहज़ादियाँ जिनके नाम ज़ैनब और उम्मे कुलसूम हैं ज़माने को पेश कीं जिन्होंने मासूम इमामों के साथ इस्लाम को बाक़ी रखने में पूरी मदद की।

इसके अलावा यह भी एक अलग निशानी है कि दुनिया में आप अकेली बीबी हैं जिन्हें उम्मु अबीहा कहा गया और वह भी ज़बाने वही व रिसालत से। यह शर्फ़ सिर्फ़ आपकी ज़ात को हासिल है।

अक़वामे आलम को इतने बेहतरीन अफ़राद अता करने का एअ्ज़ाज़ जो हज़रत फातिमा ज़हरा को हासिल हुआ यह उनकी शख़्सी आज़ादी का मज़हर नहीं है। औलाद में अपनी छाप को पेश करना कोई आसान काम नहीं है। और अक़वाम की इससे बड़ी कोई ख़िदमत नहीं है। यह ख़िदमत तमाम इन्तिज़ामी उमूर पर मुक़द्दम है। तो मैं अर्ज़ करूँगी कि फिर औरत को क्यों मज़लूम व बेसहारा और ज़लील समझा जाये।

दूसरी अहम चीज़ पर्दा है जिसका शुरु में तज़किरा आ चुका है। सूरए नूर की 31वीं आयत में इसका वाज़ेह हुक्म मौजूद है। इसका दर्स अज़ीम भी हमें शहज़ादी के उस्व–ए–हसना से मिलता है। पर्दा समाज की बुराईयों और बेराहरवी का दरवाज़ा बन्द कर देता है। इन्सानी समाज को सालेह तरीन समाज बनाने के लिये सबसे ज़ियादा ज़रूरी चीज़ है। बेपर्दगी गुनाहों को जनम देती है और गुनाहगार समाज इस्लाम का मक़सूद समाज नहीं है। समाज अगर नेक नहीं होगा तो बुराई वाला हो जायेगा और बुरा समाज एक ही तरह औरत और मर्द की हिफाज़त के लिये बवाले जान है। तहक़ीक़ का अमल खो जाता है और शैतानियत हर जगह इन्सानों के बीच नाचने लगती है यह सूरते हाल इन्फ़ेरादी और इज्तेमाई हर एतबार से हर इन्सान के सिर्फ़ और सिर्फ़ घाटे की वजह है, नफा की वजह हो ही नहीं सकती।

इसलिये बिना किसी शक के कहा जा सकता है कि सालेह इन्सानी समाज बेपर्दा हो ही नहीं सकता। इस मुख़्तसर सी तमहीद के बाद देखिये कि पर्दे के सिलसिले में उस्व–ए–बतूल (स0) क्या है। सिद्दीक़–ए–ताहिरा वह साहेबे नज़र हैं कि जब रसूले अकरम (स0) के सवाल पर कि औरत के लिये सबसे बेहतर चीज़ क्या है कोई जवाब न दे सका तो आप ने फरमाया कि औरत के हक़ में सबसे बेहतर चीज़ यह है कि न मर्द उसे देखें और न वह मर्दों को देखे। ग़ौर फरमाइये कि इस जवाब से आपने यह ज़ाहिर कर दिया कि पर्दा सिर्फ़ औरत ही की ज़िम्मेदारी नहीं बल्कि पर्दे के क़याम में मर्द को भी बराबर का शरीक होना पड़ेगा। इसी तरह दूसरे मौक़े पर आपने ख़्वातीन के जनाज़े को खुले तौर पर ले जाने को नापसन्द फरमाया और अपने लिये ताबूत पसन्द फरमाया कि किसी को क़दो क़ामत का भी अन्दाज़ा न हो सके। इस तरह आप ने अपने इस अमल से ज़ाहिर कर दिया कि पर्दा सिर्फ़ ज़िन्दगी तक ही महदूद नही बल्कि रूह के निकल जाने के बाद भी पर्दा रहता है। एक तीसरा वाक़ेआ पर्दे के सिलसिले में उलमा–ए–किराम ने तहरीर फरमाया है कि एक नाबीना सहाबी फातिमा (अ0) के घर तशरीफ लाये तो आपने यह कहकर इजाज़त नहीं दी कि सहाबी नाबीना हैं तो क्या हुआ! मैं तो नाबीना नहीं हूँ। इस तरह उम्मत की मोमिनात को अपने अन्दाज़ के ज़रिये पर्दे का दर्स इनायत फरमाया। यह ज़ाहिर फरमाया कि पर्दा कोई क़ैद नहीं है। बल्कि समाज को ज़िन्दा व ताबिन्दा रखने के लिये ख़्वातीन की जानिब से एक तोहफा है।

उस्व–ए–फातिमा में आज़ादी–ए–निस्वाँ की एक और नुमायाँ दलील ख़ुत्ब–ए–फिदक है। इस मौक़े पर बीबी ने उम्मत की ख़्वातीन को यह दर्स इनायत किया है कि हक़ की ख़ातिर और बातिल का सर झुकाने के लिये दरबारे शहंशाह में जाकर भी कल्म–ए–हक़ बुलन्द किया जाना चाहिये। इस ख़ुत्बे का मुतालआ करें तो आपको अन्दाज़ा होगा कि पर्दा नशीन कोई ग़ुलाम या क़ैदी नहीं बतिल के ख़िलाफ ठोस इरादा भी हो सकता है।

इस ज़िम्न में तीसरी चीज़ सब्र है। समाज की फलाह व बहबूद सब्र के बग़ैर मुमकिन नहीं। लालच भी समाज को तबाह व बर्बाद कर देती है आज अपने चारों तरफ नज़र दौड़ाइये हर तरफ लालची लोगों की भीड़ है जो आराम के सामान की ख़ातिर बेईमानी को ईमान, हर नाजायज़ को जायज़ और हर हराम को हलाल बनाये हुए हैं। एक दौड़ है जिसमें हर शख़्स शामिल है कि किसी तरह ज़ियादा से ज़ियादा वसाएल उसे मिल जायें। यही वजह है कि समाज जराएम पेशा हो गया है

सब्र व क़नाअत इन समाजी जराएम से छुटकारे का सबब हो सकते हैं।

जनाब फातिमा (अ0) की हयाते तय्यबा पर एक नज़र फरमाइये तो सब्र की कोई इन्तेहा ही नहीं क़ुर्आने करीम में सूरए दह्र शाहिद है तीन दिन के मुस्तक़िल रोज़े तीनों का अफ्तार साएल के पास चला गया।

इसके अलावा यह वाक़ेआ है कि आपकी वालिदा अरब की मलका थीं मगर आपने कभी राहत व आराम और ज़ेबो ज़ीनत की ज़िन्दगी को पसन्द नहीं किया। बल्कि हमेशा अपने किरदार को एक नमून–ए–अमल बनाकर पेश किया। आपके वालिदे मोहतरम मुख़्तारे कायनात थे और आप उनकी इकलौती बेटी थीं मगर आपने कभी इस रिश्ते से फायदा नहीं उठाया। तमाम ज़िन्दगी ज़हमत और मुसीबत बर्दाश्त करती रहीं। आपके शौहर अमीरुलमोमिनीन (अ0) थे लेकिन तमाम ज़िन्दगी किसी तरह की कोई फरमाईश नहीं की। आपके बेटे जन्नत के नौजवानों के सरदार हैं जिनके लिये जन्नत का लिबास और खाना मौजूद था मगर आप बावजूद इसके फाक़ों में ज़िन्दगी बसर करती रहीं।

आपको रब्बुल आलमीन ने पाँच औलादें अता कीं मगर सबको राहे ख़ुदा में क़ुर्बान कर दिया सब्र व रिज़ा का इससे बड़ा नमूना किसी ज़माने में किसी ख़ातून ने पेश नहीं किया सिवाय बतूल सैय्यद–ए–आलम (अ0) के। और यह सिर्फ इसलिये कि आपका सब्र मोमिनाते इस्लाम के लिये एक उस्व–ए–हसना रहे और इस्लामी समाज सब्र की दौलत से मालामाल होकर सालेह बन सके।

मिसालें बहुत दी जा सकती हैं मगर इख़्तेसार ज़रूरी है इसलिए इन चन्द मिसालों पर इक्तेफा किया जा रहा है। ताकि मोमिनात उन पर अमल करके इस मग़रिबी प्रोपोगन्डे का शिकार होने से बच सकें जो हमारी इज़्ज़त और पाकदामनी की ताक में बैठा है। आज़ादी–ए–निस्वाँ का ग़लत मतलब समझा कर समाज को बुराई की भटठी में धकेल कर अपनी हवस पूरी करना चाहता है। और अपने महंगे हथियार बेचना चाहता है ताकि समाज बदअमनी और ज़बरदस्ती का शिकार रहे और यह मफाद परस्त लोग अपना उल्लू सीधा करते रहें।

बना लेता है मौज ख़ूने दिल से ख़ुद चमन अपना
वह पाबन्दे क़फस जो फितरतन आज़ाद होता है

आख़िर कलाम में यह दुआ है कि अल्लाह तआला हमें सीरते फातिमा ज़हरा (अ0) पर अमल करने की तौफीक़ अता फरमाये और मग़रिबियत के फरेबी जाल में फंसने से हमारी बच्चियों की हिफाज़त फरमाये और हम इन सिफात को अपने अन्दर पैदा कर सकें जिनको बयान करने की ताक़त ज़बान व क़लम में मौजूद नहीं और जो यक़ीनन अहात–ए–तहरीर से बाहर हैं।

ज़ौजियत से बढ़ गयी शाने सिफाते मुर्तज़ा
फातिमा (अ0) ज़ीनत दह औसाफे शौहर हो गयीं

औरत पर्दे की आग़ोश में

कनीज़ महदी काज़मी, जामेअतुज़्ज़हरा

तारीख़ गवाह है कि जितनी अहमिय्यत इस्लाम ने औरत को दी है उतनी किसी भी अदियाने दुनिया ने नहीं दी और यह मुशाहेदे की बात है कि इन्सान की निगाह में जिस चीज़ की क़द्र व क़ीमत जितनी होगी उतनी ही उसकी हिफ़ाज़त का इन्तिज़ाम करता है, चाहे अपनी जान ज़रर में आ जाए लेकिन इस चीज़ को ज़रर में नहीं आने देता इसी तरह निगाहे माबूद में औरत की अज़मत इस क़द्र बुलन्द व बाला है इसकी मुहाफिज़त के लिए पर्दा क़रार दिया बल्कि क़रार ही नहीं दिया वाजिब कहा है और हर साहेबे अक़्ल इस बात को क़बूल करता है।

वाजिब उस काम को कहते हैं जिसमें मुकम्मल तौर से फायदा हो ज़रर और कोई नुक़सान न हो और अगर उसको छोड़ दिया जाए तो ज़रर का सामना करना पड़ेगा बस इसी तरह खुदावन्दे आलम ने औरत पर पर्दा वाजिब क़रार दिया इसमें औरत की मुकम्मल तौर से मुहाफिज़त है अगर उसको तर्क कर देगीं तो नाकाम रहेगी और उसकी कोई हक़ीक़त नही होगी अगरचे पर्दा एक छोटा सा लफ़्ज़ है लेकिन औरत के लिए यह उतना ही ख़ास मक़ाम रखता है जितना शार्गिद के लिए उस्ताद, फूल के लिए खुश्बू, अन्धेरे में रोशनी, परेशानी के वक़्त मददगार, अन्धे के लिए सहारा, औलाद के लिए वालदैन।

शायद यह तो मुमकिन हो लेकिन पर्दे के बग़ैर आज कल के माहोल में ज़िन्दगी गुज़ारना बड़ा मुशकिल है बिलकुल उसी तरह से जैसे :–

जिस्म है रूह नहीं है, फूल है खुश्बू नहीं, हिदायत देने वाले हैं पैरवी करने वाले नहीं, मस्जिद हो नमाज़ पढ़ने वाले नहीं, काबा हो तवाफ करने वाला नहीं।

लेकिन लोगों ने पर्दे को ज़ुल्म तसव्वुर कर लिया है क़ैद ख़ाना समझ लिया है लोग कहते हैं पर्दे ने औरत की आज़ादी सल्ब कर ली है पर्दे में रह कर औरत किसी काम को अन्जाम नहीं दे सकती पर्दे से औरत की ज़िन्दगी का मक़सद बेकार हो जाता है।

पर्देदार के बारे में यह भी तसव्वुर किया जाता है कि पर्देदार औरत दुनिया का कारोबार नहीं कर सकती और पर्दा करने से वह एक अज़्वे मुअत्तल होकर रह जाती है।

यह बात ग़लत है इसलिए कि इस्लाम की तारीख़ ही एक पर्देदार ख़ातून की तिजारत से शुरु हुई है लिहाज़ा इस्लाम इस बात को किस तरह क़बूल कर सकता है कि पर्देदार औरत तिजारत नहीं कर सकती है इस्लाम इस राह में हायल नहीं होता अलबत्ता इस्लाम इस बात की इजाज़त नहीं देता कि माल के कारोबार को वसीला बनाकर इज़्ज़त व आबरू का कारोबार शुरु कर दिया जाए।

मुआशरे में पर्दे की बात तो अलग है वह तो अक़्ल व फितरते सलीम का तक़ाज़ा है इस्लाम ने इस वक़्त भी पर्दे का ख़याल रखा है जब औरत तनहाई में बन्द कमरे में अपने परवरदिगार की बारगाह में खड़ी होती है और नमाज़ अदा करना चाहती है और इस्लाम इससे मुतालबा करता है कि मुकम्मल हिजाब के साथ मुसल्ले पर आये और हरगिज़ कोई जिस्म का ग़ैर ज़रूरी हिस्सा खुलने न पाये ताकि औरत को यह एहसास पैदा हो कि पर्दा ज़रूरते ख़तरात से बचाने का ज़रिया नहीं है बल्कि इज़्ज़त व करामत व शराफत व हशमत में इज़ाफे का ज़रिया भी है और परवरदिगार इस पर्दे के ज़रिये उसे अज़मत ही देना चाहता है इसकी इज़्ज़त व अज़मत को कम नहीं करना चाहता है पर्दा औरत का ख़ूबसूरत केस (Case) है।

इन्सान ज़मीन पर रखे सामान को नज़र अन्दाज़ कर देता है सब जानते हैं अच्छी खूबसूरत क़ीमती चीज़ को छुपाकर शीशे में रखा जाता है शीशे में रखी चीज़ की तरफ सब बढ़ते हैं इसी तरह औरत है इसका शीशा पर्दा है कि अगर वह पर्दे में है तो साहेबे इज़्ज़त व तकरीम है लेकिन अगर बेपर्दा है तो हर इन्सान ज़मीन पर पड़े सामान की तरह ठोकर मार कर आगे बढ़ जायेगा।

लेकिन बदक़िस्मती यह है कि इस दौर की औरतें खुद इस बात को सोचती है कि औरत पर्दे में रहकर मजबूर हो जाती है और बेबस हो जाती है जबकि ऐसा नहीं है। तो इन औरतों के लिए जीती जागती मिसाल जनाब फातमा ज़ेहरा (अ0) हैं कि उन्होंने पर्दे में रहकर अपना हक़ तलब किया, पर्दे में रहकर बच्चों की लाजवाब परवरिश की, पर्दे में रहकर ओहद में पैग़म्बर (स0) की मदद की जबकि जनाब फातमा के दौर में ज़ाते औरत से ही नफरत की जाती थी लेकिन आज के दौर में औरत को 100 प्रतिशत जीने का हक़ है।

आज के ज़माने की एक ख़ास बात व खुसूसियत यह है कि आज कल जब पर्दे की दावत दी जाती है तो लोग एक जवाब देते हैं कि पर्दा करने की ज़रूरत क्या है? आँख़ और दिल तो पाक हैं।

मैं उनके जवाब में कहूँगी कि शैतान तो हमेशा साथ रहता है जब वह जनाबे आदम को बहका सकता है तो बन्दए मआसी व गुनाहगार किस तरह दावा कर सकते हैं कि शैतान हमको नहीं बहका सकता।

अबु अब्दुल्लाह (अ0) फरमाते हैं:– ''नामहरम की तरफ निगाह करना शैतान की तरफ से फेंका हुआ तीर है और कितनी निगाहें ऐसी हैं जिनकी हसरतें तवील हो जाती हैं।''

लेकिन अगर औरत पर्दे में रहे तो यह नौबत ही नहीं पहुँचेगी कि शैतान की तरफ से तीर आये। (फिर किसी की हसरतें भी तवील न होंगी।)

बेपर्दा रहना शैतान का फेंका हुआ एक तीर है जब औरत बेपर्दा रहती है तो मुआशरा में फसाद बरपा हो जाता है। इसी बिना पर खुदा ने पर्दे का वाजिब क़रार दिया है। औरत सिर्फ पर्दे की आग़ोश में खूबसूरत व बेहतर लगती है जिस तरह कोई फुलवारी गुलदान में अच्छी लगती है उसी तरह औरत पर्दे की आग़ोश में अच्छी लगती है।

बस रब्बे करीम से हमारी दुआ यही है कि हमको भी शहज़ादी–ए–कौनैन की तरह ज़िन्दगी गुज़ारने की तौफीक़ अता फरमाए। और तमाम जहान की औरतों को शैतानी वसवसे से दूर रखे उनके हिजाब (पर्दे) को महफूज़ रखे और जो बेहिजाब है उनको हिजाब करने की तौफीक़ अता फरमाए।

बक़िया जिहादे फातिमा (अ0).................

ज़िन्दगी तवील जिहाद से मअमूर (भरी पुरी) है। फातिमा (स0) के सिवा कोई ख़ातून नहीं जो रसूल (स0) के बाद आने वाले ज़माने में मुसलमान ख़्वातीन के लिये नमून–ए–अमल बन सके। दुख़्तरे रसूल (स0) ने बेटी बनकर, बीवी बनकर, और माँ बनकर हर किरदार को अज़मत अता कर दी। आप ने बता दिया कि औरत सिर्फ़ सिन्फे नाज़ुक ही नहीं बल्कि वक़्त पड़ने पर बातिल ताक़तों के लिये कारी ज़रब (सख़्त चोट पहुँचाने वाली) भी बन सकती है।

दुनिया का हर बड़ा इन्सान एक अज़ीम आग़ोश में परवरिश पाता है। इस मुख़्तसर सी गुफ्तगू को इस पैग़ाम पर ख़त्म करना चाहता हूँ कि ऐ फातिमा ज़हरा (स0) से मुहब्बत करने वाली बीबियों तुम बेटी हो, बहन हो, ज़ौजा या माँ हो, हर रिश्ता अज़ीम रिश्ता है यह तमाम रिश्ते मुहब्बतों के रिश्ते हैं। लेकिन वक़्त पड़ने पर इन तमाम मुहब्बतों को दीन पर कैसे निछावर किया जाता है यह दुख़्तरे रसूल (स0) से सीखो। आग़ोशे ज़हरा (स0) की तरबियत का असर कर्बला में देखो। किस तरह हुसैन (अ0) और ज़ैनब (स0) ने तमाम मुहब्बतों को नाना के दीन पर निछावर कर दिया। खुदाया! हमें तौफीक़ दे कि हम मादरे हुसैन (अ0) के जिहाद को समझ सकें। और पैग़ाम सुन सकें।

ऐ जबीने मुस्तफा यह तो बता
कितने सिज्दों का सिला है फातिमा (स0)

इदारा

मुख्य समाचार

क़ुर्आन मजीद की बेहुरमती के ख़िलाफ़

हज़ारों मुसलमानों ने जुलूस निकाल कर ज़बरदस्त मुज़ाहेरा किया

लखनऊ 3, जून। अमरीकी फौजियों के हाथों क़ुर्आने पाक की बेहुरमती के ख़िलाफ़ हज़ारों शीआ सुन्नी मुसलमानों ने जुलूस निकाल कर ज़बरदस्त मुज़ाहेरा किया। इस मौक़े पर मुज़ाहेरे में शरीक होने वालों ने अपने ग़मो गुस्से का इज़हार करते हुए अमरीका, बिर्टेन और इसराईल मुख़ालिफ नारे बाज़ी की। तारीख़ी आसफ़ी मस्जिद में नमाज़े जुमा ख़त्म हुई तो इमामबाड़े के सहन में एक ख़ुशनुमा माहोल था। शीआ सुन्नी क़ौम के हज़ारों की तादाद में जमा नौजवान एक साथ मिलकर अमरीका मुर्दाबाद, बिर्टेन मुर्दाबाद और इसराईल मुर्दाबाद के नारे लगा रहे थे।

क़ुर्आन मजीद की बेहुरमती के ख़िलाफ़ मौलाना सय्यिद कल्बे जवाद साहिब ने कहा कि अमरीकी फौज के हाथों क़ुर्आने पाक की बेहुरमती पूरे आलमे इस्लाम बल्कि पूरे अमन और इन्साफ पसन्द अफ़राद के लिये शर्म की बात है। उन्होंने कहा कि एक सच्चा मुसलमान कभी क़ुर्आन जैसी पाक और मोहतरम किताब की बेहुरमती बर्दाश्त नहीं कर सकता।

मौलना ने ताज्जुब का इज़हार करते हुए कहा कि वह लोग जो अपने आपको क़ौम का लीडर और सरपरस्त मानते हैं इस हस्सास मौक़े पर क्यों ख़ामोशी इख़्तियार किये हुए हैं। उन्होंने अफसोस ज़ाहिर किया कि उन तमाम शीआ और सुन्नी उलमा पर जो इस हस्सास मसले पर भी ख़ामोशी इख़्तियार किये हुए हैं उन तमाम लोगों की ख़ामोशी सिर्फ और सिर्फ अमरीका के मफाद में है। आज मौलाना ने फिर एक बार मुसलमानों से अमरीका की बनी हुई चीज़ों के बाइकाट करने की अपील की। उन्होंने कहा कि हम पेप्सी और कोका कोला को नहीं पीते बल्कि मुसलमानों के ख़ून को पी रहे हैं। इसलिये कि यह कम्पनियाँ मुसलमान दुश्मन ताक़तों की हैं जो मुसलमानों का ख़ून बहा रही हैं। मौलाना ने तमाम मुसलमानों से अपील की है कि इस बेहुरमती के ख़िलाफ़ ख़ामोश न रहें और अमरीका के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलन्द करें।

आज के मुज़ाहेरे में मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के उपाध्यक्ष डाक्टर सय्यिद कल्बे सादिक़ साहब ने भी शिरकत की। इनके अलावा मौलाना अमीर हैदर, मौलाना मुहम्मद हैदर, मौलाना डाक्टर गुलज़ार, मौलाना असीफ जायसी, मौलाना अलमदार अब्बास साहेबान और दीगर शीआ सुन्नी उलमा ने शिरकत की। इस मुज़ाहेरे में मुख़्तलिफ अन्जुमनों, तनज़ीमों ने बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया और जगह–जगह पानी की सबीलों का इन्तिज़ाम भी किया।

दो ताक़तें सरचश्म-ए-शीईयत है एक अज़ादारी और एक मरजेईयत - मौलाना हसन ज़फ़र साहब

लखनऊ 3, जून। हुसैनिया–ए–गुफ़रान मआब में नूरे हिदायत फाउण्डेशन के जानिब से रहबरे इंक़िलाबे इस्लामी आयतुल्लाहिल उज़्मा रूहुल्लाहुल मूसवी अलख़ुमैनी (रह०) की सोलहवीं बरसी के मौक़े पर एक अज़ीमुश्शान सेमीनार क़ाएदे मिल्लते जाफरिया मौलाना सय्यिद कल्बे जवाद नक़वी की सरपरस्ती में मुनअक़िद किया गया। इस मौक़े पर मुक़र्रिरीन ने उनकी ज़िन्दगी पर रोशनी डालते हुए कहा कि इमाम ख़ुमैनी ने दुनिया के सामने शीईयत की पहचान बनायी है।

इस सेमीनार में ईरानी सफारतख़ाने के कलचरल काउन्सलर जनाब मुर्तज़ा शफ़ीई शकीब साहब ने इमाम ख़ुमैनी की ज़िन्दगी पर रोशनी डालते हुए कहा कि हमें हमेशा होशियार रहना चाहिये और सुस्ती व काहिली न बरतनी चाहिये क्योंकि क़ुर्आन मजीद में भी है कि सुस्ती से काम ना लो वरना कहीं तुम्हारा दुश्मन ताक़तवर न होता चला जाये। उन्होंने कहा कि छठे इमाम (अ०) के पैग़ाम को अपनाओ और दीन के दुश्मनों के साथ नरमी न बरतो।

पाकिस्तान से तशरीफ लाये मुजाहिदे मिल्लत अल्लामा सय्यिद हसन ज़फ़र नक़वी साहब ने अपने मख़सूस अन्दाज़ में ख़िताब करते हुए कहा कि आज

दुनिया मरजेईयत की ताक़त को तोड़ने की साज़िश कर रही है क्योंकि जब कोई मरजए तक़लीद फतवा दे तो हर शीआ का फ़र्ज़ है कि उस पर अमल करे और इसकी ज़िन्दा मिसाल अभी दुनिया ने इराक़ में देख ली कि जब एक मरजए तक़लीद ने हुक्म दिया कि कर्बला व नजफ की तरफ चलो तो उस हुक्म पर सत्तर लाख शीआ दौड़ पड़े। यह है मरजेईयत की ताक़त जब नायब की यह ताक़त है तो उसकी क्या ताक़त होगी जो पर्दा–ए–ग़ैब में है। उन्होंने कहा कि दो ताक़तें सरचश्म–ए–शीअीयत हैं एक अज़ादारी और एक मरजेईयत और यह दोनों ताक़तें इमाम हमको देकर गये हैं। यही वह दो बुनियादी ताक़तें हैं जिसके ख़िलाफ इस्तेमारी ताक़तें मुसलसल काम कर रही हैं कि किसी तरह इनके दरमियान से मरजेईयत व अज़ादारी को कमज़ोर कर दिया जाये।

सेमीनार की सदारत कर रहे डाक्टर मौलाना सय्यिद कल्बे सादिक़ साहब ने कहा कि इमाम ख़ुमैनी के इंक़िलाब ने यह दिखा दिया कि अगर मुसलमान उलमा की सही रहनुमाई पर चलें तो सब कुछ कर सकते हैं। उन्होंने कहा कि आज अमरीका ने क़ुर्आन की बेहुरमती की जिस पर दुनिया भर के मुसलमान एहतेजाज कर रहे हैं और एक मुसलमान होने के नाते यह करना भी चाहिये। लेकिन साथ में आपको इस बात का भी पता होना चाहिये कि बाज़ ज़मीर फ़रोश मुस्लिम रहनुमा ने यहूदियों और ईसाईयों के इशारे पर क़ुर्आन मजीद से वह आयतें जो यहूद व नसारा की मज़म्मत से मुताल्लिक़ हैं, उन्हें निकाल दिया। इससे बड़ी अफसोस की बात क्या हो सकती है।

इस मौक़े पर मुअीनुश्शरीअत मौलाना सय्यिद कल्बे जवाद ने मोमिनीन को ख़िताब करते हुए कहा कि मुसलमानों को चाहिये कि वह आपस में मुत्तहिद होकर इस्तेमारी ताक़तों का मुक़ाबला करें। इस सेमीनार में मौलााना रिज़ा हैदर, मौलाना अमीर हैदर, मौलाना गुलज़ार अहमद ख़ाँ, मौलाना असीफ जायसी, मौलाना क़ुर्बान अली और मौलाना हैदर रिज़ा साहेबा ने शिरकत की।

उम्मते मुस्लिमा के इत्तेहाद के लिये इमाम ख़ुमैनी की काविशों को जारी रखने की ज़रूरत

इमाम ख़ुमैनी (रह0) की सोलहवीं बरसी पर मुनअक़िद सेमीनार में उलमा व दानिश्वरों के तास्सुरात

6, जून नई दिल्ली। इमाम ख़ुमैनी (रह0) की सोलहवीं बरसी के मौक़े पर यहाँ जामिया मिल्लिया इस्लामिया में ''इमाम ख़ुमैनी और ईरान में इस्लामी जमहूरिया का क़याम'' मौज़ू पर अलक़ुर्आन एजुकेश्नल सोसाइटी के ज़ेरे एहतेमाम एक सेमीनार का इन्इक़ाद किया गया। सोसाइटी में के जारी करदा प्रेस रिलीज़ के मुताबिक़ सेमीनार में उलमा और दानिश्वरान ने नक़ीबे वहदते इस्लामी हज़रत इमाम ख़ुमैनी (रह0) को ख़िराजे अक़दीत पेश करते हुए उम्मते मुस्लिमा के इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक़ के लिये जद्दोजहद को जारी रखने पर ज़ोर दिया।

इस मौक़े पर मौलाना कल्बे जवाद नक़वी ने मुसलमानों में बाहमी इत्तेहाद और इत्तेफ़ाक़ पर ज़ोर देते हुए कहा कि इमाम ख़ुमैनी साम्राजी ताक़तों से कभी ख़ौफज़दा नहीं हुए। हमें चाहिये कि हम अमरीका और उसके हामियों का मुत्तहिद होकर बिना किसी ख़ौफ के मुक़ाबला करें। उन्होंने यह भी कहा कि उम्मते मुस्लिमा की कामियाबी और फलाह को इमाम ख़ुमैनी ने हमेंशा तरजीह दी और सारी ज़िन्दगी इस जद्दोजेहद में लगे रहे।

डा0 अब्दुल हक़ अन्सारी ने कहा कि उन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी अवाम की भलाई के लिये वक़्फ कर रखी थी। रजब नज़ाद ने इमाम ख़ुमैनी की हयात और ख़िदमात के मुख़्तलिफ हिस्सों पर रोशनी डाली। उन्होंने कहा कि आयतुल्लाह ख़ुमैनी ने दिलों पर हुकूमत की और एक अज़ीम जमहूरी निज़ाम क़ायम किया। उन्होंने यह भी कहा कि इमाम ख़ुमैनी ने लोगों को राहत व मुकम्मल सुकून पहुँचाने में अपनी ज़िन्दगी वक़्फ कर देने की तालीम दी।

प्रोफेसर अज़ीज़ुद्दीन हुसैन ने इमाम ख़ुमैनी और ईरान के जमहूरी निज़ाम का तारीख़ी जायज़ा पेश किया। मौलाना सय्यद अली नक़वी, मौलाना रईस अहमद जारचोई और रिज़वान क़ैसर ने भी अपने तास्सुरात पेश किये।

इसके अलावा शकील हसन शमसी, अज़ीम अमरोहवी, हैदर करतपुरी और ज़ाहिद औरंगाबादी ने मन्ज़ूम नज़राना अक़ीदत पेश किया। इससे पहले सेमीनार का आग़ाज़ मौलाना हैदर महदी क़रीमी ने तिलावते क़ुर्आन करीम से किया। सेमीनार के कन्वीनर मौलाना जलाल हैदर नक़वी ने शरीक होने वालों का शुक्रिया अदा किया।